भगवत् कृपा

THE DIVINE GRACE

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली मासिक सत्संग पत्रिका

वर्ष 21 अंक : 6 | शुक्रवार, 26.6. 98 | वार्षिक चंदा : 50.00

गुरुपूर्णिमा...

प्रार्थना करने का अनमोल अवसर लेकर
फिर 'गुरुपूर्णिमा' आ गई.....
सो, इस हेतु 'अनिर्देश' में
9 जुलाई '98, गुरुवार को
धून, भजन, दर्शन, सत्संग का लाभ लेने
और
महाराज व सभी के आदि गुरु गुणातीत,
ब्रह्मस्वरूप प.पू. काकाजी महाराज
एवं
सभी गुणातीत स्वरूपों का
पूजन करने हम सभी एकत्रित हों.....

समय : सुबह 7.15 से 8.30 तक
प्रसाद : सुबह 8.30 बजे
स्थान : 'अनिर्देश', काकाजी लेन, स्वामिनारायण मार्ग, अशोक विहार-III, दिल्ली-110052

सूचना :– वे मुक्त जो सुबह के उपरोक्त समय पर धून-भजन-सत्संग का लाभ लेने नहीं आ सकते, वे सारे दिन में किसी भी समय आ करके 'गुरुपूजन' कर सकेंगे।

गुरु चरणकमल बलिहारी.....

अनोखी पवित्रता-भक्ति का सुवास फैलाती हुई शिष्यों को जागृत करने हर साल की तरह '**गुरुपूर्णिमा**' नज़दीक आ रही है..... स्वामिनारायण सम्प्रदाय तो गुरुमुखी सम्प्रदाय है... और 216 वर्ष से मानवरूप में प्रभुधारक विभूतियों द्वारा गुरुपरंपरा चलती आ रही है.....

कलियुग का गंदा प्रवाह बह रहा है.... एक ओर दिन-प्रतिदिन विज्ञान कल्पना से परे की प्रगति कर रहा है तो दूसरी ओर संस्कार, मानवता, नैतिक गुणों का निरन्तर ह्रास हो रहा है..... जीव को ख्याल तक नहीं है कि वो क्या कर रहा है ? केवल देह, इन्द्रियों और मनबुद्धि की गुलामी में हर कोई

अपना जीवन व्यतीत कर रहा है। ऐसे अज्ञान के भंवर से जीव को निकालेगा कौन ? सच्ची स्वतंत्रता कौन बक्षेगा ?

सच्चा संत ही अपने विचार-वाणी-वर्तन से आत्मा को झंझोड़ कर सच्चा मार्ग दिखा सकता है। बाहरी व आन्तरिक कुरुक्षेत्र से बचने के लिए हर एक के जीवन में ऐसे किसी समर्थ गुरु की सेरेछाया परम आवश्यक है..... और समर्थ गुरु के मिलने से हमारे जीवन में पवित्रता प्रगटती है.... ऐसे सत्पुरुष हमें नियम के बंधन में रखकर भी सच्ची मुक्ति व निर्भयता प्रगटाते हैं।

संबंध में आए चैतन्यों का निरन्तर जतन करके उनकी आत्मा की यात्रा को हमेशा प्रभु सन्मुख रखने का महाभगीरथ कार्य भगवत्स्वरूप संत-सद्गुरु करता है और आत्मा की सच्ची रक्षा करके चैतन्य का आध्यात्मिक विकास करता है। चैतन्यों को प्रकृतिपुरुष से पर ले जाने ही भगवानधारक संत निरंतर छुपा परिश्रम करता रहता है। जोग में आए चैतन्य से चिपटे स्थूल, सूक्ष्म, कारण और महाकारण के भावों को निकालता है।

कोई दोषों में डूबे रहते हैं, कोई स्वभाव प्रकृति युक्त वर्तते रहते हों, कोई गुण के ही भावावेश में लिप्त रहते हैं। अनंत प्रकार के पाप जो जीव को चिपटे हैं, इन्हें दूर करने गुरु परिश्रम करता है—संकल्प करता है, आशीर्वाद देता है, बल देता है। यहां तक कि चैतन्य की कक्षा पर खुद आकर उसकी सेवा लेकर चेतना को साफ-सुथरा करके उत्तम भक्त बनाने ही गुरु का परिश्रम होता है। अरे ! हमारे प्रारब्ध अपने माथे पर लेकर हमारी भूलों का प्रायश्चित् भी वही करते हैं। यूं भगवान रखे संत की हर क्रिया हितकारी, मंगलकारी, दिव्य व कल्याणकारी-चैतन्यलक्षी ही होती है।

जिस प्राप्ति के लिए कठोर साधना करनी पड़े वो गुरुकृपा से सहज ही प्राप्त होती है। असल में गुरु ने प्रभु को प्रसन्न करके भगवान् के साथ ऐसा तादात्म्य स्थापित किया होता है कि गुरु और प्रभु के बीच कोई अंतर नहीं रहता। ऐसे गुरु का पूजन करें-सेवा करें तो वह प्रभु को ही पहुँचती है। हमारा पूजन, सेवा प्रभु को पहुँची ही है, इसकी प्रतीति भी सच्चा गुरु शिष्य को भीतर में कराता है।

जिसके जीवन में से इष्टदेव व गुरु एक सैकण्ड भी गौण ना हो पाये वही शिष्य का गुरु के साथ का सच्चा संबंध कहा जाये। ऐसे जागृत सेवक के पक्ष में भगवान अखंड रहते हैं। लेकिन अनेक प्रकार के सूक्ष्म राग हेत, माया, दया, प्रीति के लिबास में हमें गुरु के साथ सही अर्थ में संबंध करने ही नहीं देते। सो ही सेवा भक्ति का जो फल मिलना चाहिए वह नहीं मिल पाता। दूसरी ओर हम सभी कर्म भगवान की मर्जी के मुताबिक करने सक्षम भी नहीं होते..... क्योंकि हमारी समझ शक्ति की मर्यादा खूब सीमित होती है।

लेकिन..... भगवान प्रगटाये गुरु को बुद्धिमत्ता, सयानेपन, सत्ता, शक्ति, भौतिक पदार्थों, गुणों-अवगुणों का सहज भी भार नहीं होता.... वह तो केवल शिष्य की भावना-'हृदय' को ही देखता है। सो ही गुरु को प्रसन्न करने की भावना जिसे दृढ़ हो, उसे चाहे कैसे भी विरोध, मुश्किलें, घर्षण, सुख-दुःख के प्रसंग आयें, पर वे उसे स्पर्श नहीं कर पायेंगे। बाहरी व आंतरिक विपरीत परिस्थिति उसे स्पर्श नहीं करती। इससे भी अधिक शिष्य को अपने स्व-बल, बुद्धि के अभिमान, शक्ति, समझदारी का, गुणों का-दोषों का एहसास करा कर सच्चा गुरु बारीक-बारीक रजोगुण, तमोगुण, सत्वगुण की वृत्तियों से परे ले जाता है। सात्त्विक भाव की आड़ में तो कई बार हम अपनी मान की वृत्ति को पोसते रहते हैं; पर सच्चा गुरु हमें उसमें भी फिसलने नहीं देता....

यूं गुरु की कृपा के फलस्वरूप मूल प्रकृति का रुपांतर होता है, भयंकर बुरे प्रारब्ध धुल जाते हैं..... गुण के वेग कम होते हैं। हृदय हल्का होता है। मन आनंदविभोर रहता है। आध्यात्मिक मार्ग सरल व सुगम बनता है और आखिर प्रभु के साथ संबंध भी गुरु करा देता है। प्रभु को प्रसन्न करने की करामात गुरु बताता है, सूझ देता है। उसके जँचते में वर्तने का बल देता है।

पर, इन सब के लिए गुरु के वचन की ओर निगाह रखना शिष्य के लिये खूब जरूरी है.... उसे सिर्फ यही मानना है कि मैं गुरु का प्रकाश, दास-सेवक हूँ। दास को खुद का कोई अधिकार नहीं होता... पूर्ण समर्पण ही होता है। समर्पण यानि—सब्मीशन नहीं.....'स्व' का अस्तित्व भूल कर पूरी कॉन्शीयसनेस बदल जाए.... जैसे लड़की की शादी होते ही उसकी कॉन्शीयसनेस ही बदल जाती है कि मैं अब फलां की घरवाली हूँ। ऐसे ही सच्ची आध्यात्मिक गरिमा स्वयं का अस्तित्व और अस्मिता को गुरु में खोकर पिघाल देने में है।

सच्चा शिष्य स्वयं में गुरु जैसी शक्ति, सामर्थ्य या अपने पीछे शिष्यों का विशाल समूह होने के बावजूद अपना स्वामी-सेवकभाव अत्यधिक जाग्रतता से पकड़े रखता है..... शिष्यों द्वारा पूजे जाने पर भी वह उनमें बंधता नहीं। यूं शिष्य जब सम्पूर्ण गुरु में खो जाता है, तो उसका अपना प्रिय कुछ भी नहीं रहता; वह आकाशरूप हो जाता है।

वच.म. 37 के मुताबिक सच्चे शिष्य को तो अपने गुरु में अप्रतिम विश्वास और उसके प्रति अतिशय प्रीति बनी रहती है.... चन्द्रमा की भाँति घटती-बढ़ती, ज्वार-भाटों वाली प्रीति कभी भी गुरु को प्रसन्न नहीं करने देगी। उर्ध्वरेत,

शास्त्रज्ञाता, सतीत्व जैसे और चाहे अनंत गुण हममें क्यों ना हों—पर अगर भगवत्स्वरूप संत-गुरु की ओर हमारी निगाह नहीं रहती तो वह सब निरर्थक है। गुरु का प्रेम तो मीठा लगे, पर उसकी डाँट-उपेक्षा भी उतनी ही मीठी लगे... गुरु में जितना मनुष्यभाव व मायिकभाव उतना हमारा आध्यात्मिक मार्ग-प्रॉसेस लम्बा और जितना गुरु में अखंड दिव्यभाव व निर्दोषबुद्धि उतनी अधिक व त्वरित प्राप्ति.... अब यह अपने हाथ में है कि हमें हमारा मार्ग लम्बा करना है या छोटा ? तो क्यों ना **'गुरुपूर्णिमा'** के परम पवित्र अवसर पर अपनी ये सभी प्रकार की ग्रन्थियाँ छोड़ने दृढ़-संकल्प करें !

✡✡✡✡✡

जहां जा-जाकर प.पू. काकाजी ने सर्वप्रथम सत्संग के बीज बोये उस अमेरिका की धरती पर प.पू. काकाजी की 80 वीं जन्म जयंती.....

दि. 12, 13,14 जून' 98 के मंगलकारी दिनों में प.पू. काकाजी की 80वीं जयंती सभी गुणातीत स्वरूपों की सेरेछाया में **'दिव्य एकता महोत्सव'** के रूप में **शिकागो** के 'टाफ्ट हाई स्कूल' में अत्यधिक भव्यता से मनाई गई। **प.पू. दिनकरभाई, पू. महेन्द्रबापू** के मार्गदर्शन में शिकागो-कनाड़ा-पेरिस के मुट्ठीभर हरिभक्तों ने इस महोत्सव में तन, मन, धन से अपना पूर्ण योगदान देकर अनोखी भक्ति अदा की और सभी प्रगट गुणातीत स्वरूपों की प्रसन्नता प्राप्त कर ली.....धन्यवाद-धन्यवाद ! सभी की अनुपम सेवा-भक्ति को.....

प. पू. काकाजी वहां सिर्फ पाँच-दस हरिभक्तों के लिए जाते और तब वहां कुछ ज्यादा लोग सत्संग के लिए इकट्ठे नहीं होते दिखाई पड़ते थे। पर, तब **प.पू. काकाजी** ने पू.बापू को कहा था कि-**अभी तो सिर्फ यहां बीज छांट रहा हूँ; आगे जाकर तुम देखना यहां सत्संग के वटवृक्ष बनेंगे और....आज उनके द्वारा कही आशीर्वादरूप वाणी का हम साकार रूप देख रहे हैं....** इन गुणातीत स्वरूपों की पारदर्शी दृष्टि की हम क्या कल्पना भी कर पायेंगे.....!

'दिव्य एकता महोत्सव' में दर्शन, समागम का लाभ देने पधारे प.पू. पप्पाजी, प.पू. स्वामिजी, पू. हरिभाई कोठारी, पू. प्रेमस्वरूपस्वामी, पू. शांतिभाई, पू. हिम्मतस्वामी, पू. भरतभाई, पू. वशीभाई, प. पू. बेन, पू. ज्योति बहन, पू. मम्मीबा, पू. योगिनी बहन की उपस्थिति ने देश-विदेश के हरिभक्तों को अत्यधिक आनंदित कर दिया था। महोत्सव से अधिक एक आध्यात्मिक शिविर का दर्शन यहां सभी को हुआ.....

12 जून की शाम को सर्वप्रथम प. पू. पप्पाजी के वरद् हस्तों प. पू. काकाजी के जीवन का दर्शन कराती एक छोटी परन्तु अविस्मरणीय प्रदर्शनी का उद्घाटन किया गया। उसके बाद महोत्सव की शुरुआत प.पू. पप्पाजी, प.पू. दिनकरभाई, पू. प्रेमस्वामी, पू. हरिभाई कोठारी, पू. महेन्द्र बापू, पू. शांतिभाई ने समूह में दीप प्रज्ज्वलित करके करी.....प. पू. पप्पाजी ने 'हेपी बर्थ डे.....' के जयनाद के बीच केक काटा। पू. दिनकरभाई ने उद्घाटन प्रवचन करते हुए कहा कि—'हम यहां से कुछ पाकर जाएं और आध्यात्मिक भोजन बांध लें—ऐसी स्वरूपों के चरणों में प्रार्थना.....' तत्पश्चात् अनेक मुक्तों ने प. पू. काकाजी की महिमा गाई। पू. दिनकरभाई, पू. बापू के अनहद् परिश्रम को सराहा। अंत में प.पू. पप्पाजी ने आशीर्वचन बरसाये कि—**'प.पू. काकाजी स्वयं साधु थे तो अपने जैसे ही साधु-स्वरूपों को तैयार किया, जो उनके जैसा ही कल्याण करें.....'**

13 जून की सुबह अलौकिक वातावरण में सभी स्वरूपों व मुक्तों के दिव्य सान्निध्य में सभा की शुरुआत हुई। पू. बापू ने सभी का स्वागत करते हुए 'दिव्य एकता महोत्सव' का अर्थ बताया और कितने दिव्य एकत्वभाव से यह मनाया जा रहा है, उसका विस्तृत दर्शन कराया। पू. जयंतीभाई-टोरोन्टो, पू. ललितकाका, पू. शशिकांतभाई, पू. आर.डी. काका और पू. भक्तिस्वामी ने प.पू. काकाजी के दिव्य गुणों का माहात्म्य दर्शन कराया.....पू. हरिभाई कोठारी साहेब ने अपनी लाक्षणिक शैली में—**'प.पू. काकाजी, प. पू. पप्पाजी द्वारा किए गए बहनों के उत्थान के अद्भुत कार्य की सराहना की.....विवेकी भक्त बनने का आग्रह किया व दूध में जैसे चीनी घुल जाने पर ही मिठास आती है, वैसे ही प्रभु के स्वरूप में यदि हम अपने अहम् को पिघाल दें, तो सहज आनंद प्राप्त हो पायेगा'।**

प.पू. दिनकरभाई ने बताया कि—**'जब तक अपेक्षा है तब तक दुःख है। हमें अपेक्षा से पर होना है और आध्यात्मिक-अन्तर के आनंद को बढ़ाना है व जीवन में बनते प्रसंगों में भजन का बल-उपाय लेना है'।**

प.पू. स्वामिजी ने आशीर्वाद देते हुए कहा कि—**'बड़े पुरुषों के प्रसंगों को नित्य याद करके भजन करना। वच. प्र. 67 के मुताबिक प्रायश्चितरूप प्रार्थना में डूब जाना.....अगर प्रभु के बालक बनकर जीयोगे, तो हर एक प्रसंग प्रभु का प्रसाद लगेगा.....अखंड मस्ती रहेगी। जो बालक बनने के मार्ग पर चलेगा, उसे ही दिव्य एकता प्राप्त होगी'।**

प.पू.पप्पाजी ने आशिष बरसाते हुए कहा कि—**'काकाजी, शास्त्रीजी महाराज व योगीजी महाराज के पास बालक**

बनकर जीये.....बापा ने उन्हें साक्षात्कार कराया और काकाजी ने सभी को बापा में लगाव करा के निर्दोषभाव दृढ़ कराया– एक समाज तैयार किया। सब कुछ किया, पर सदा हल्के फूल होकर जीये। अक्षरधाम से ही पधारे थे; सो अक्षरधाम की रीत से ही जीये। हम भी इसी प्रकार सारी चिंता सत्पुरुषों पर छोड़कर भजन का आसरा लेते हो जायें.....'

दूसरे दिन शाम को सभा की शुरुआत टोरोन्टो मंडल के भक्तों ने धून्य-भजन से करी। इसके पश्चात् प. पू. काकाजी के ऐतिहासिक प्रवचन (26 जनवरी 1986) की वीडियो कैसेट द्वारा सभी को दर्शन हुआ व प.पू. काकाजी के प्रेरक प्रसंगों पर आधारित **'चैतन्यशिल्पी'** नाम की एक छोटी नाटिका प्रस्तुत करी गई। इसमें दर्शाये गए भक्तिभाव व उत्साह की सभी गुणातीत स्वरूपों-हरिभक्तों ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की।

14 जून को पूर्णाहुति की सभा में सभी गुणातीत स्वरूपों का फूलों के हार द्वारा स्वागत किया गया और पवाई की बहनों द्वारा बनाये गए विशिष्ट हार भी गुणातीत स्वरूपों को अर्पण किए.....फिर प.पू. अक्षरविहारीस्वामिजी (सांकरदा), प. पू. गुरुजी (दिल्ली) और पू. विट्ठलदासभाई (हरिधाम) द्वारा भेजे संदेश सभा में पढ़े। पू. भरतभाई, पू. वशीभाई, पू. विष्णुभाई, पू. शांतिभाई, पू. प्रेमस्वरूपस्वामिजी ने माहात्म्य दर्शन कराते हुए गुणातीत स्वरूपों के चरणों में प्रार्थना रखी। पू. हरिभाई कोठारी ने अपनी लाक्षणिक शैली द्वारा खेल-खेल में ज्ञान देने वाली उक्ति को सार्थक रूप दिया।

प.पू. स्वामिजी ने आशिष देते हुए कहा कि–**'दिव्य एकता' यानि गुणातीत सत्पुरुष के साथ की एकता.....गुणातीत पुरुषों के दिल में से एक ब्रह्मप्रवाह सतत् बहता ही रहता है। हम उस करुणा के प्रवाह में सच्ची अभिप्सा रखकर स्नान करते रहें'**–ऐसी भावना व्यक्त करी। फिर प.पू. काकाजी के माहात्म्य का दर्शन कराते हुए पू. गुरुजी और पू. बापू को खूब याद करते हुए उनकी प्रकृति का जो सम्पूर्ण रुपांतर हुआ है उसका दर्शन कराया–'धर्मज' में पू. गुरुजी ने प.पू. स्वामिजी को जो प्रार्थना लिख कर भेजी थी, वह दोहराई और प.पू. स्वामिजी ने **प.पू. दिनकरभाई की साधुता और हर एक प्रसंग को प्रसाद रूप मानकर सहज स्वीकार करने वाली समझदारी की बहुत प्रशंसा की**.....

इस मंगल प्रसंग पर प.पू. काकाजी के जीवन सूत्रों व संकलित भजनों की **'ब्रह्मपराग'** नामक पुस्तिका का प.पू. पप्पाजी, प.पू. स्वामिजी के वरद् हस्तों अनावरण हुआ, व प.पू. काकाजी के प्रवचनों की 10 कैसेट 'ब्रह्मधारा' भी प्रदर्शित हुई।

इस महोत्सव में शिकागो मंडल की माहात्म्य दृष्टि, आत्मीयता, सेवा, भक्ति, भावना हर एक को भीतर तक छू गई। नौकरी, पढ़ाई, घर के कामकाज होते हुए भी गृहस्थों, युवकों, बहनों ने छः महीने से अनहद् परिश्रम किया। सभी के रहने की व्यवस्था, प्रदर्शन, ट्रांसपोर्ट, डेकोरेशन, भोजन आदि की सेवा संभाली और सभी को राजी कर लिया। प.पू. दिनकरभाई, पू. बापू के वचन व मार्गदर्शन से एक छोटे से समाज ने हर प्रकार से स्वयं को सेवायज्ञ में याहोम करके जिस अद्भुत भक्ति-भावना का परिचय दिया–वह श्रद्धा, भक्ति, विश्वास देख कर अपने आप ही दिल सहज ही नतमस्तक हो उठता है.....

इस प्रकार यह तीन दिन का महोत्सव सभी के जीवन की एक चिरंजीव स्मृति तो बना ही, साथ ही प. पू. काकाजी को जो भावात्मक दिव्य एकता गुणातीत समाज में व्यापक बनानी थी, उसकी अभिप्सा जागृत करने की एक मंगल शुरुआत थी। यूं 'दिव्य एकता महोत्सव' सभी के दिल में एक दिव्य स्मृति के रूप में बसकर सफल हुआ !

✡✡✡✡✡

अनिर्देश की गतिविधियाँ

हर साल की तरह इस बार भी प.पू. काकाजी की जयंती निमित्त सुबह 6:30 से 8:15 तक एक महिने के 'जपयज्ञ' का कार्यक्रम अनिर्देश में 16 मई, शनिवार से प.पू. गुरुजी व प.पू. भाईस्वामिजी के सान्निध्य में शुरु हुआ। हरिभक्त तो इस दिन की बेसब्री से राह देख रहे थे.... सब की इतनी अधिक उमंग व उत्साह देख कर मुमुक्षुता का दर्शन होता है और प.पू. काकाजी के शब्द याद आते हैं कि–**'उत्तर भारत में कई मुक्तों ने जन्म धरा है**.....! कुछ पा लने की भूख हर एक के चेहरे पर दिखाई देती है.... सुबह 6:30 बजे तो करीब 150 हरिभक्तों का समूह इकट्ठा हो जाता..... इतना ही नहीं–मुक्तों की ओर से यह सूचन भी आया कि–नवरात्रे की छुट्टियों में भी ऐसा कार्यक्रम बनाया जाये।

प.पू. गुरुजी की परावाणी का, सूचनों का, गहराई भरी बातों का दूर-सुदूर रहे–सभी को यह लाभ मिल पाए–इसी भावना से फिर से **'श्रवन, मनन, और निदिध्यासन'** के रूप में 'भगवत् कृपा' के इस अंक से आप सभी को पहुँचाने का अल्प प्रयास कर रहे हैं।

जीवमात्र आज मानसिक, शारीरिक, सांसारिक उलझनों से जकड़ा हुआ है। निःस्वार्थ प्रेम के लिए तरसा हुआ है और सच्चे संत के सिवा इन सब बंधनों से मुक्ति व भीतर की शांति

कोई नहीं दे सकता। प.पू. गुरुजी द्वारा रखे इस धून के कार्यक्रम से सभी हरिभक्तों को पूरे साल के लिए जैसे अनेक व्यावहारिक प्रश्नों के तो समाधान तो मिलते हैं ही, साथ ही आध्यात्मिक मार्ग पर आगे बढ़ने की सूझ, बल, प्रेरणा मिलती है।

✷ 14 जून 1998, रविवार के मंगलकारी दिन प.पू. काकाजी की जयंती स्थानिक रूप से अत्यधिक हर्षोल्लास व उमंग से प. पू. गुरुजी के सान्निध्य में मना कर भक्ति अदा की और साथ ही इसी दिन अनिर्देश में चल रहे एक महीने के जपयज्ञ की भी पूर्णाहुति हुई !

14 जून की शाम को मंदिर के हॉल में लगता था–मानो महाराज व सभी गुणातीत स्वरूप प.पू. काकाजी की जयंती के उत्सव में तैयार खड़े थे। करीब पाँच सौ हरिभक्तों का समूह एकत्रित हो गया था। संतों, युवकों द्वारा बनाया प.पू. गुरुजी के बैठने के लिए फूलों से सुसज्जित बहुत ही सुन्दर आसन सभी को सहज आकर्षित कर रहा था। सभा की शुरुआत में पू. निमित्तस्वामी, प.भ. राकेशभाई, प.भ. विनोद भईया (पंजाब), प.भ. दीपकजी व प.भ. मंजुल साहब ने प.पू. काकाजी के जीवन पर आधारित भजन गाकर सभी को प.पू. काकाजी की स्मृति में डूबो दिया.....पुराने जोगी प.भ. डॉ. शर्मा, प.भ. चांदप्रकाशजी, प.भ. विकास मल्कानी, प.भ. मल्कानी साहेब इत्यादि द्वारा प.पू. काकाजी की महिमा के प्रवचन के पश्चात् प.पू. गुरुजी ने 'सहृदयी' पुस्तक में से प.पू. काकाजी के सुहृद्भाव-निर्दोषबुद्धि का दर्शन कराते प्रसंग पढ़वा कर समझाये.....प्रसंग सुनकर हर एक को ऐसा हो रहा था कि ओहो स्वरूप व उनके अल्प संबंध वाले के साथ कैसा जीवन जीना चाहिए, वह प.पू. काकाजी ने स्वयं जीकर बताया।

गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज, गुरुहरि योगीजी महाराज को जो उन्होंने एक बार भगवान का स्वरुप माना तो जीवन के अंतिम क्षण तक उनके कैसे भी चरित्रों में उन्हें मायिकभाव-मनुष्यभाव कभी भी नहीं आया.....प.पू. काकाजी के जीवन के चार-पाँच प्रसंग सुनकर सभी हरिभक्तों को लगा कि सच में स्वरुप के साथ जीवन जिया तो सही अर्थ में इसे ही कहा जाये.....

सभा के पश्चात् सभी ने प्रसाद लिया और मन ही मन कोटी वंदन करते हुए अनिर्देश से विदा ली.....

✡✡✡✡✡

'श्रवण, मनन और निदिध्यासन'

✷ प.पू. काकाजी कहा करते थे–हम सब श्रद्धालु नास्तिक हैं... सो, आस्तिकभाव से प्रार्थना करनी कि प्रभु मेरी प्रार्थना सुन ही रहे हैं।

✷ इस भजन के फलस्वरूप इतना तो हो ही जाना चाहिए कि भगवान् मेरे साथ अखंड हैं..... मैं कहीं भी पुकार करुँगा वो सुनेंगे ही.....

✷ संतों के प्रति अखंड दिव्यभाव–अखंड सद्भाव रहे, ऐसी भक्ति करनी। कभी ठीक लगे, कभी ठीक ना लगे–ऐसे ज्वार-भाटे नहीं आने चाहिए। सो, प्रार्थना करके रोज़ माँगना चाहिए कि मुझे सत्संग में हमेशा दिव्यभाव रहे.... सद्भावना रहे–ऐसे आशीर्वाद दो !

✷ एक पांव पर खड़े रहना, व्रत करना, तपस्या करनी..... यह सब हम कर-करके–इससे कई गुणा करके आए हुए हैं..... तब प.पू. काकाजी जैसे संत मिले हैं। अब साधना यह करनी है कि अपने मन को छोड़कर बस उनके मुताबिक हमें चलना है।

✷ हमारा स्टार्न्डड अलग है..... हमारी डिसिप्लीन भी अलग है। जहां अपना मन नहीं मानता हो, दिमाग साथ नहीं देता हो; भीतर गवाही जैसी नहीं देता लगता हो.... तो भी दिव्यभाव से–खुशी से मानना कठिन चीज़ है... वो स्टार्न्डड, वो कक्षा में हम आए हुए हैं।

✷ प्रभु को अखंड प्रगट मान कर जीना–वो सच्ची भक्ति है।

✷ सच्चा भक्त वह–जो पल-पल ऐसा मानता हो कि मेरे जीवन में जो कुछ भी हो रहा है, वो मुझे मिले प्रभु ही कर रहे हैं.... ऐसे भक्त के देशकाल–विपरीत परिस्थितियाँ-मुसीबत प्रभु अपने सिर पर लेते हैं....

✷ अक्सर ऐसा माना जाता है कि जो भगवान की भक्ति करता है, वह दुःखी रहता है। पर भगवान स्वामिनारायण ने भक्त को तो भुक्ति, मुक्ति, स्थिति तीनों ही दी है।

✷ हमें अपने से ज्यादा दूसरों की चिन्ता रहती है कि वो क्यों सुधरता नहीं ? हम सुधर जायेंगे तो बाकी सब अपने आप ठीक हो जाएगा।

✷ पहले दिन हम सब सत्संग में आए और साधु के प्रति हमें जो भाव था... फिर वो स्वामी हमें डांटे, हमारा ध्यान ना रखे–कुछ भी करे; तब भी वही दिव्यभाव रहना चाहिए।

✷ हमें और कोई साधना नहीं करनी.... प.पू. काकाजी, प.पू. पप्पाजी, प.पू. स्वामिजी जैसी विभूतियों के हर चरित्र जँचाने हैं.....

- विदेश में हमारी बिरादरी का कोई मिल जाता है तो हम कितने खुश हो जाते हैं कि ओहो ! यहां अपना कोई भाई मिल गया..... बस, हम में इतना अपनापन तो होना ही चाहिए कि एक दूसरों को देखकर, एक दूसरे के पूरक बन जायें.....
- रोज़ एक सत्कर्म करना। सत्कर्म यानि–ऐसा नहीं कि रोज़ 1000 रुपये की सेवा करो ! या रोज़ इतना दूध ले आओ..... किसी भक्त को किसी भी तरह सहायरूप होना... यह करेंगे तो एक महीने में अपने आप में बहुत फर्क पड़ जाएगा..... सत्कर्म बहुत बड़ी चीज है।
- हम पझेझीव इन्सटिंक्ट में बंधे जाते हैं... हर एक को पता है कि हम कितनी भी पझेझीव इन्सटिंक्ट रखें, आखिर में तो वह रहने वाली है ही नहीं। लाख कोशिश करो तब भी नहीं रहने वाली है। हर एक को अलग-अलग ढंग की पझेझीवनेस होती है–
  – किसी को मान की पझेझीवनेस रहती है।
  – किसी को कीर्ति की पझेझीवनेस रहती है।
  – किसी को स्त्री की पझेझीवनेस रहती है।
  – किसी को आबरू की पझेझीवनेस रहती है।
  यह रखने की जरूरत नहीं है... हम यह नहीं रखेंगे, तो हमारी सारी चीजें प्रभु करेंगे।
- किसी भी बात का हम आग्रह रखते हैं कि यह होना चाहिए, तो जरूर समझना कि हमारा कोई ईगो है। अगर हम किसी प्रसंग पर आग्रह छोड़कर पीछे हठ कर लेंगे, तो प्रभु अपने आप सामने से और अच्छी तरह वह सेट करके देते हैं..... पर, पीछे हठ रोष से या मजबूरी से नहीं–प्रभु का कर्ता-हर्तापन मान कर करनी चाहिए।
- अपने स्वभाव का तुरन्त दर्शन होने लगे वह केवल गुणातीत समाज में ही संभव है और कई जगह पर नहीं। क्योंकि गुणातीत भाव को पाया हुआ साधु एक दर्पण है.... यह सत्संग एक दर्पण है.... हम जैसे हैं वैसे ही दर्पण में दिखाई पड़ेंगे....
- खूब समझना कि मंदिर में प्रवृत्ति इसलिए ज्यादा रखी हुई है कि अपना मन डावांडोल ना हो, मन स्कीमींग ना कर जाये..... इसलिये बहुत जरुरी है कि हम ऐसी भक्ति रूप क्रियाओं में जुड़े रहें.....
- प्रवृत्ति कितनी भी करें, पर उसका मनन-चिंतन नहीं.... जैसे टॉयलेट जाकर फिर उसका मनन्-चिंतन नहीं होता। भजन करने बैठे तब तो फिर प्रवृत्ति का जरा भी चिंतन नहीं करना।
- अपना तो सारा एप्लाईड ब्रह्मज्ञान है...भगवान सीधे के साथ सीधे–पर अड़ियल के साथ बहुत अधिक जिद्दी रहते हैं।
- हम प्रभु को कर्ता तो मान लेते हैं, पर हर्ता नहीं मान पाते। कुछ गड़बड़ होने पर हम तुरन्त कह देते हैं कि हमारे नसीब ही खराब हैं.... भगवान भी इसमें क्या करेंगे ?..... फलां व्यक्ति ने सारा बिगाड़ दिया। यह बीच में टांग नहीं अड़ाता तो सब ठीक हो जाता.... यह सोच ही हमारी सरासर गलत है, जो हमें बदलनी चाहिए।
- कुछ भी बने तो उसका सहर्ष स्वीकार करें..... स्वीकार लड़-झगड़ कर नहीं, दुःखी होकर नहीं–अपने आपको मजबूर समझ कर नहीं.....
- संसार का मनन-चिंतन नहीं करना... संसार गृहस्थ का ही होता है ऐसा नहीं–त्यागियों का भी संसार होता है, मंदिर की क्रियाएं.... यह तो मैं ही करुंगा.... मेरे बिना यह नहीं होगा। इसने क्यों करा.... उसने मुझे यह कह दिया वगैरह.... वो सारा त्यागी का संसार कहा जाए।
- सबसे आसान रास्ता सरलता का है। संत जो कहे वो किया करो। मन में ना जंचता हो, लेकिन साधु के कहने से सिर्फ 'हाँ' कर देंगे; तो वो इतने राजी हो जाते हैं जिसकी हम कल्पना नहीं कर सकते।
- सत्संग में रहते-रहते धीरे-धीरे हमारा निशान बदल जाता है–चूक जाते हैं, गुमराह हो जाते हैं.... भटक जाते हैं। इसलिए फिर सारी तकलीफें पड़ती हैं।
- खाली समय में भजन व कथावार्ता करो।
- संसार में जलकमलवत् रहना... जैसे कमल कीचड़ में रहते हुए भी उससे अलिप्त रहता है। हमेशा सारा दिन अपना मन परमसत्यस्वरूप संत में पिरोए रखेंगे.. उनकी बातें, उनकी कथा, उनकी चर्चा, उनकी महिमा का गुणगान करते रहेंगे..... करते ही रहेंगे... तो यह हो जायेगा।
- कुछ और हो या ना हो–उसकी कोई चिन्ता ही ना करें। हमें एक ही चीज़ पर लगे रहना है–किसी तरह भगवान की मूर्ति सिद्ध कर लेनी है।
- ऐसा यदि रखेंगे कि सब कुछ उनका दिया हुआ है, तो जनक राजा का ज्ञान शांति देगा, वर्ना अशांति रहेगी–बेचैनी रहेगी, हिचक रहेगी, उतावलापन रहेगा.... जनक राजा को ऐसा था कि जो कुछ है वो प्रभु का दिया हुआ है। वो संभालेंगे–हम कौन-सा कुछ साथ लेकर आए थे? यह बोलना आसान है, पर जीना बड़ा कठिन है। पर इन सभी का एक ही हल है कि ऐसे संत के साथ हमारा लगाव ऐसा हो जाए कि बाकी सभी चीजें फीकी लगें।
- संत के साथ यदि दृढ़ लगाव होगा तो कोई ज्वार-भाटे हमें डिगा नहीं सकेंगे।
- भक्त की व्याख्या एक ही है कि मानवस्वरूप में भगवान प्रगटाए हुई विभूति की जिसे पहचान हो–वो भक्त !
- सेवा वह कही जाये कि साधु ने हमें सौंपी हो, फिर साधु को एकदम निश्चिंतता रहे कि मैंने कहा है उसी ढंग से काम हो ही गया होगा।

- हम सिर्फ मंदिर में ठीक ठाक-सयानेपन से व्यवहार करें या शो-शा करने अच्छा बर्ताव करें.... वो ठीक नहीं ! हमें तो घर में भी 'तू-तू', 'मैं-मैं' झगड़ा वगैरह नहीं करना चाहिए। घर में भी सरल रहना चाहिए।
- स्वरूप का ज्ञान क्या ? जो कुछ हो रहा है वो मुझे मिले हुए प्रभु ही सब कर रहे हैं।
- हमने पू. काकाजी को समझा तो नहीं, बल्कि उन्हें मिसअन्डरस्टैंड किया। जैसे हमने पू. काकाजी की जल्दीबाजी को भी उतावलापन समझ लिया। लेकिन उनकी जल्दीबाजी वो कोई उनका नेचर नहीं था, पर हम जल्दी से जल्दी आगे चले जायें—उसकी उन्हें तलब थीं; उनकी एक तीव्र अदम्य इच्छा थी कि कब हम भगवान की मूर्ति पा लें।
- बड़े संत के शब्द सबीज ज्ञान है। जैसे सरसों के दाने रास्ते में बिखर जाने पर हमें ऐसा होता है कि निकम्मा गया... लेकिन बारिश आने पर वे सरसों के दाने उगेंगे। वैसे ही जो ज्ञान हमने साधु से सुना होगा; वो मौके पर काम आएगा।
- कसौटी सच्चों की ही होती है। बाजार में जाकर कभी कोई लोहे की परख नहीं करेगा, लेकिन सोने की परख करेंगे कि कितने कैरेट का है ? एक बात विश्वास से मानना कि जब संतों को हमारा भरोसा आता है तब ही वे हमें कसनी में लेते हैं। वर्ना हमें छेड़ेंगे ही नहीं। जो करना है करो... साधु को अगर हमारा भरोसा होगा तो वह सख्त होकर भी मनमानी करने नहीं देगा। तब समझना कि हमारा भरोसा है.....
- कई बार हमें लगता है कि क्या हमें ही दबे रहना है ? हमें ही सहन करना है। हमारा कुछ नहीं होना है। ऐसा जब मन हावी हो तब स्वरूप का भरोसा रखकर हिम्मत रखना।
- व्यवहार का दुःख है, तो खूब विचार करना कि हमारी निष्ठा में कोई कसर है। स्वभाव का दुःख है तो जहां रहते हैं वहां आपस में सुहृदभाव में कसर है। वर्ना तो स्वभाव टिक ही नहीं पाएं, पिघल ही जाएं। सुहृद्भाव मजबूरी में नहीं, प्रभु की सत्ता मान कर रखना है। इस भावना से सुहृद्भाव रखना कि मैं ऐसा व्यवहार करूंगा तो प.पू. काकाजी राजी हो जाएंगे।
- हम सभी के भीतर मान का परदा है। वो पतले कांच की भांति है जहां हम टकरा जाते हैं और अपने को पता नहीं चलता कि अपने अहं से टकराते हैं व दुःखी होते हैं। संत को पता चलता है कि यह अहं टकराता है और जीव अहं के टकराने से दुःखी होता है।
- हमारे मन के हिसाब से सब ठीक ठाक चलता रहे, तब तक साधु हमें जंचता है और थोड़ी-सी कुछ गड़बड़ हो जाने पर हम तुरन्त सोचने लगते हैं कि साधु को तो पक्षापक्षी है। मंदिर में तो भेदभाव (Partiality) है..... ऐसे संजोगों में भी भगवान-संतों का अभाव अवगुण आए ही नहीं—दिखाई पड़े पर हम लें नहीं, वह आत्मबुद्धि कही जाये।
- हर एक में एक अच्छा गुण होगा ही होगा..... स्वामी विवेकानंद ने बहुत अच्छी बात करी थी कि किसी में कोई कमी दिखाई पड़ती है.... हम झांक कर देखेंगे तो हमारे भीतर भी वो होगी ! क्योंकि यह कॉमन वीकनेस है। लेकिन, अपनी ढकने के लिए दूसरों का देखा करते हैं और जिसकी कोई अच्छाई दिखाई पड़ेगी वो उसकी निजी आऊटस्टेंडिंग फिचर होगी।
- ..... निष्ठा पक्की रख करके और गुण-ग्राहक रहकर के 15 मिनिट स्वामिनारायण का जाप करेंगे—ऐसे संतों की स्मृति के साथ, तो भगवान हाजराहजुर रह करके अपना काम हल करेंगे।
- यह रहस्य की बात है कि—
  1. किसी के भी अभाव-अवगुण, टीका-चर्चा में ना पड़ें।
  2. प्रगट की पक्की दृढ़ निष्ठा—जो भी होता है वो प्रगट प्रभु ही करते होंगे
     और
  3. मेरे हित में करते होंगे।

  ये तीन चीज पक्की रखकर 15 मिनिट धून करें, तो प्रभु हमारी समस्या का हल निकालेंगे ही। (क्रमशः)

✡✡✡✡✡

चातुर्मास (5 जुलाई '98 रविवार से 31 अक्टूबर '98 शनिवार तक) के विशेष नियम.....

चातुर्मास के नियम लेकर पवित्रता की सुवास फैलाती आषाढ़ शुक्ला एकादशी नज़दीक आ रही है.....ऐसा कहा जाता है कि इस दिन से भगवान शयन करने जाते हैं। पर, दूसरी ओर यह भी बात है कि यदि भगवान सच में शयन करने जायें तो फिर सृष्टि का कारोबार ही कैसे चले? लेकिन भक्तों को अपनी निरन्तर स्मृति कराने प्रभु ऐसे चरित्र ग्रहण करते हैं। सो, ये चार महिने कुछ विशेष नियम लेने गुरुओं की आज्ञा है, जिससे हमारी इन्द्रियाँ अंतःकरण संयमित बनें.....हमारे मन के ज्वार-भाटों का वेग कम हो। लेकिन कई बार हम सोच लेते हैं कि नियम बन्धनरूप हैं। गहराई से विचार करेंगे तो, प.पू. प्रमुखस्वामी महाराज के शब्दों में—वास्तव में देखा जाए तो **धर्म के बन्धन—'बन्धन' नहीं बल्कि मुक्ति के साधन हैं।**

हम तो प्रगट के उपासक हैं–गुणातीत परंपरा के सद्गुरुओं का संबंध हुआ है.....क्यों ना हम इनके द्वारा चातुर्मास के नियम लेकर और उन्हें अमल में ला कर अपने वृत्ति-स्वभावों का रुपांतर इन चार महीनों में कर लें....और उन्हें अपनी ओर से 'हाश' कर दें...आईये निम्नलिखित नियमों को ग्रहण करके अपनी साधना के पथ में आगे बढ़ें....

1. छोटी-मोटी हर एक दैनिक क्रियाएँ-जैसे सुबह उठना, बोलना, स्नान करना, चाय-नाश्ता करना, भोजन करना, बाहर जाना-आना, सोना आदि का आरम्भ भगवत्स्वरूप संत की स्मृति समेत एकाध मिनिट जपयज्ञ या अजपाजप करके ही करें।
2. **संत का ऐसा जोग दिया, उसके धन्यवाद स्वरूप** रोज सुबह उठते ही हमें मिले प्रगट गुरुहरि की स्मृति करके तीन मिनिट ध्यान में बैठकर इन्हें 'धन्यवाद-धन्यवाद' कहने का अभ्यास करना।
3. जिन्हें सुविधा हो वे-सुबह के भजन व शाम की धून व कथा में मंदिर या सत्संग केन्द्र में आयें। जो ना आ पायें वे अपने घर पर सुबह 15 मिनिट धून व सायं आरती के बाद 15 मिनिट धून अचूक करें।
4. भजन के साथ स्वामी की बात प्र. 13 की बात 4 में स्वामी ने वृद्धि पाने के लिए चार उपाय बताएं हैं वे निरन्तर नज़र के सामने रखना.....
5. मंदिर/सत्संग केन्द्र के जो करीब रहते हों या काम पर जाते हुए जिन्हें मंदिर/सत्संग केन्द्र रास्ते में आता हो व जो बहनें मंदिर आ पायें–वे प.पू. काकाजी की 'पुष्प समाधि' की या सत्संग केन्द्र में ठाकुरजी की रोज 31 प्रदिक्षणा करें और जो रोज ना आ पायें वे चातुर्मास दौरान मंदिर/सत्संग केन्द्र में जब भी आये तब 51 प्रदिक्षणा कर जायें।
6. मंदिर/सत्संग केन्द्र से जो करीब रहते हों, वे सायं आरती के दर्शन करने आ जायें। जो मंदिर/सत्संग केन्द्र में ना आ पाते हों-वे घर पर परिवार में जो-जो हाज़िर हों सब मिलकर हर रोज सायं आरती करें।
7. सावन का पूरा महिना यानि-24 जुलाई, शुक्रवार से 22 अगस्त, शनिवार तक एक बारी भोजन लें।
8. 5 जुलाई-नियम की एकादशी, 15 अगस्त-जन्माष्टमी, 2 सितम्बर-जलझीलनी एकादशी, 31 अक्टूबर-कार्तिकी शुक्ला एकादशी–इन चारों दिन अवश्य व्रत रखें।
9. हर शुक्ला नौमी, एकादशी व पूर्णिमा पर मंदिर दर्शन करने आ जायें।
10. अवतार पुरुषों व भगवत्स्वरूप संतों की जीवनी एवं वचनामृत, स्वामी की बातें, पत्र संजीवनी व ब्रह्मप्रवाह जैसे अध्यात्मग्रंथों एवं 'भगवत कृपा' सत्संग पत्रिका के मननीय लेखों का रोज नियम से अध्ययन करें या आधा घंटा संतों की परावाणी टेप द्वारा सुनें या तो वीडियो कैसेट द्वारा दर्शन व कथा का लाभ लें।
11. प.पू. काकाजी को 'सुहृद्भाव' खूब पसंद था, तो हम अपने साथी मुक्तों के साथ मिल-जुल कर रहें और हर प्रसंग पर गुणातीत स्वरूप को ही कर्ता हर्ता मान कर उसका सहर्ष स्वीकार कर पायें। इस हेतु रोज सुबह पूजा में प्रार्थना रखें और रात को सोते समय 10 मिनिट प्रायश्चितरूप प्रार्थना कर लें।
12. रोज सुबह या सायं या रात्रि को चालीस मिनिट तेज़ वॉकींग करें।

व्रतोत्सवसूची

(1) दि. 5.7.98 रविवार – नियम की एकादशी व्रत, चातुर्मास प्रारम्भ
(2) दि. 9.7.98 गुरुवार – गुरुपूर्णिमा
(3) दि.19.7.98 रविवार – एकादशी, व्रत

TO,

Air Mail
'**Bhagwatkripa**' Monthly Magazine
Despatched on 25/26 of every month
If undelivered please return to :—
Owner, Publisher, Editor :—
SHRI PRABHAKAR RAO *FOR* YOGI DIVINE SOCIETY-DELHI
Anirdesh, Kakaji Lane, Swaminarayan Marg,
Ashok Vihar-III, Delhi-110 052 (India) Tel.: 7229327, 7249327
Type Setting : **SHAYOKA Type Setting** B-351, Sect.-I, Rohini, Delhi-85
Printed at : **Bharat Packaging and Allied Industries**
C-2/12,Mayapuri Industrial Area, Phase-II, New Delhi-110 064
Tel.: 5401210, 5402393